



ISSN: 2456-4427

Impact Factor: RJIF: 5.64

Jyotish 2025; 10(2): 191-198

© 2025 Jyotish

www.jyotishajournal.com

Received: 05-09-2025

Accepted: 10-10-2025

डॉ. नन्दन कुमार तिवारी

सहायक आचार्य एवं अध्यक्ष, ज्योतिष
विभाग, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, उत्तराखण्ड, भारत

International Journal of Jyotish Research (वेदचक्षु)

ब्रह्मर्षि वसिष्ठोक्त षोडश कक्ष भवन विचार

नन्दन कुमार तिवारी

DOI: <https://www.doi.org/10.22271/24564427.2025.v10.i2c.312>

प्रस्तावना

वर्तमान सीमित होता हुआ भौतिक परिवेश में निवासार्थ गृहनिर्माण की बात की जाय, तो दो-तीन अथवा अधिकतम चार कमरों या प्रकोष्ठों (आज की भाषा में 2BHK, 3BHK अथवा 4 BHK) का ही भवन प्रायः समाज में देखने को मिलता है। किन्तु हमारे प्राचीन वास्तुशास्त्र में ब्रह्मर्षि वसिष्ठ के द्वारा षोडश कक्षों (कमरों) से युक्त भवन का भी विचार बतलाया गया है। चूँकि ब्रह्मर्षि वसिष्ठ द्वारा विरचित ग्रन्थ 'वास्तुविद्या' आज लुप्तप्राय अवस्था में है, जो प्राप्त होता है वह भी अपूर्ण है। इसीलिए प्राचीन भारतीय ज्ञान परम्परा के रक्षणार्थ प्रस्तुत शोध आलेख में ब्रह्मर्षि वसिष्ठ द्वारा प्रणीत 'वास्तुविद्या' ग्रन्थोक्त षोडश भवन विचार का उल्लेख करने का प्रयास कर रहा हूँ।

सर्वविदित है कि ब्रह्मर्षि वसिष्ठ ज्योतिषशास्त्र के अष्टादश प्रवर्तकों में एक है। आपका जन्मकाल वर्तमान कल्प का आरम्भिक काल है, जो १९५५८८५११७ (एक अरब पंचानवे करोड़ अष्टावन लाख पचासी हजार एक सौ सत्तरह) वर्ष प्राचीन है। वसिष्ठ ऋषि के द्वारा विरचित 'वास्तुविद्या' वास्तुशास्त्र की महनीय रचना है। सम्प्रति इस ग्रन्थ में २३१ श्लोक ही प्राप्त होते हैं। आज ग्रन्थ के स्वरूप को देखने से स्पष्ट प्रतीत होता है कि यह ग्रन्थ अपूर्ण है। इस ग्रन्थ में वास्तु सम्बन्धित अनेक विषय उपलब्ध नहीं है। ऐसा माना जा सकता है कि ब्रह्मर्षि वसिष्ठ ने अपनी वास्तुविद्या में शिल्पशास्त्र के बहुशः विषयों का वर्णन किया होगा जो आज अपने मूल रूप में उपलब्ध नहीं है। मानवी सृष्टि का आरम्भ भगवान ब्रह्मा के दस पुत्रों और उनकी संततियों से होता है। इन दस पुत्रों में देवर्षि नारद ने गृहस्थ धर्म अपनाने से मना कर दिया। उन्होंने विरक्त जीवन जीना स्वीकार किया। उन्होंने मानवमात्र का मार्गदर्शन किया और अनेक दिव्य ग्रन्थों का प्रणयन किया। ब्रह्मर्षि वसिष्ठ को ब्रह्मलोक, सप्तर्षिलोक और मर्त्यलोक में रहने का अवसर प्राप्त हुआ। उन्होंने अपने पिता भगवान ब्रह्मा से विद्या प्राप्त की। पृथ्वी पर मानवी सृष्टि को आगे बढ़ाने में ब्रह्मा के नौ पुत्रों का योगदान रहता है। अतः मर्त्यलोक की सृष्टि सप्तर्षि सृष्टि भी कही जाती है। ब्रह्मा से उत्पन्न होने के कारण सप्तर्षि भी ब्राह्मी सृष्टि के अंग हैं। ब्रह्मर्षि वसिष्ठ ने भगवान ब्रह्मा से वास्तुविद्या के संदर्भ में जो कुछ सुना उसे अपने ग्रन्थ वास्तुविद्या में व्यक्त किया।

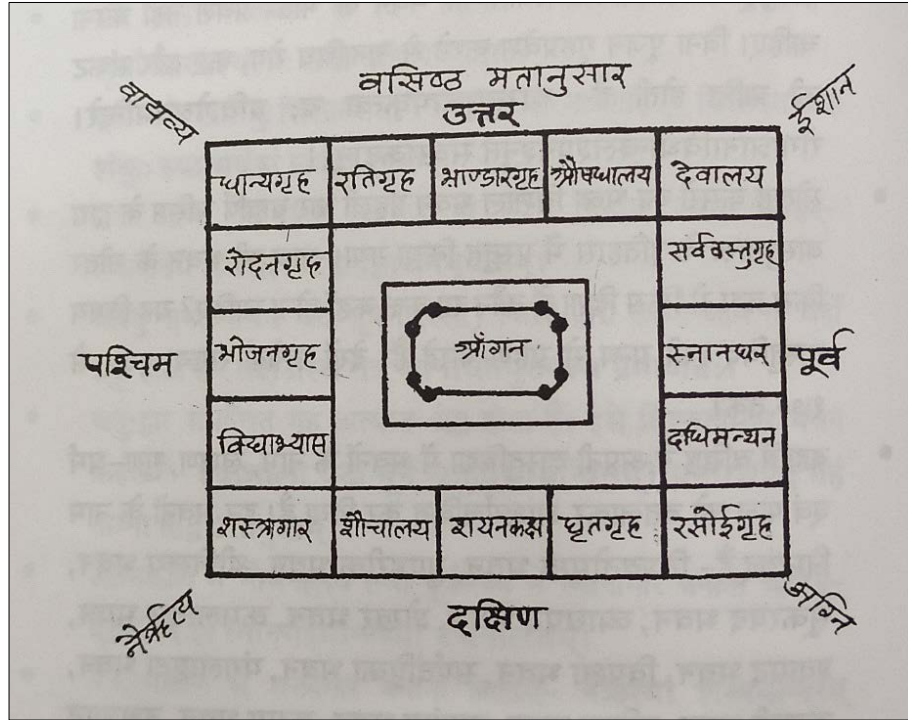
वास्तुशास्त्र के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ विश्वकर्मप्रकाश ग्रन्थ में सोलह प्रकार के भवनों का जो वर्णन प्राप्त होता है वह ब्रह्मर्षि वसिष्ठ रचित वास्तुविद्या का ही प्रतिरूप है। विश्वकर्मप्रकाश में इन भवनों का वर्णन अतिसंक्षिप्त रूप में है, जबकि वास्तुविद्या में इनके अनेक भेद नामों के साथ उपलब्ध हैं। फलतः ब्रह्मर्षि वसिष्ठ प्रोक्त वास्तुविद्या प्राचीनतम आद्य ग्रन्थों से मेल खाती है। उदाहरण के लिए सूर्यसिद्धान्त का दिक् साधन भवन निर्माण के लिए अत्यन्त उपयोगी होने के कारण वसिष्ठप्रोक्त वास्तुविद्या में उसी रूप में उपलब्ध है। वास्तुविद्या ग्रन्थ वास्तुशास्त्र के उस भाग को ज्यादा स्पर्श करती है जो ज्योतिषवास्तु का क्षेत्र है। ग्राम, पुर, नगर निर्माण तथा अधिष्ठान निर्माण आदि अनेक विषय ज्योतिषशास्त्र से बाह्य हैं एवं वास्तुशास्त्र के अन्तर्गत आते हैं। ज्योतिष से सम्बन्धित संहिता ग्रन्थों में ज्योतिषवास्तु का उपयोग प्राप्त होता है जबकि वास्तुशास्त्र का क्षेत्र अतिविस्तृत है। वास्तुविद्या ज्योतिषवास्तु का वैज्ञानिक स्वरूप प्रस्तुत करती है।

विश्व वास्तु इतिहास में ब्रह्मर्षि वसिष्ठ द्वारा प्रथम बार १६ प्रकोष्ठों से युक्त भव्य भवन का स्वरूप प्रस्तुत किया गया था –

Correspondence

डॉ. नन्दन कुमार तिवारी

सहायक आचार्य एवं अध्यक्ष, ज्योतिष
विभाग, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, उत्तराखण्ड, भारत



चित्र से स्पष्ट है कि महात्मा वशिष्ठ ने षोडश प्रकोष्ठ वाला भवन में अग्नि कोण में रसोई गृह, उसके ठीक बगल में पूर्व दिशाओं की ओर से क्रमशः दधिमन्थन प्रकोष्ठ, स्नानघर, सर्ववस्तुगृह, ईशान कोण में देवालय, उसके बगल में क्रमशः उत्तर दिशा की ओर औषधालय, भण्डारगृह, रतिगृह वायव्य कोण में धान्यगृह, पश्चिम दिशा की ओर रोदनगृह, भोजन गृह, विद्याभ्यास, नैऋत्य कोण में शस्त्रागार, दक्षिण दिशा की ओर शौचालय, शनयकक्ष, घृतगृह आदि का होना बतलाया है।

इसके अतिरिक्त ब्रह्मर्षि वशिष्ठ जी ने भवनों के नाम, लक्षण, गुण-धर्म एवं उसके फलाफल का भी उल्लेख किया है। आपके द्वारा बतलाए गए भवनों के नाम निम्नवद् हैं –

विश्वतोमुख भवन, पुण्डरीक भवन, श्रीनिलय भवन, सूकरपद भवन, व्याघ्रपद भवन, शेखर भवन, कमलाकर भवन, श्वापद भवन, विपक्षा भवन, सर्पदंष्ट्रिका भवन, मंगलाष्टदा भवन, जयन्ती भवन, हरिपद भवन, उष्ट्रदंष्ट्रा भवन, कुसुम भवन, नक्षत्रपद भवन, स्वर्णगर्भ भवन, नंदावर्त भवन, रुचक भवन, स्वस्तिक भवन, वर्द्धमान भवन, गृहराट् एवं कुबेरपद भवन, महेन्द्रपद भवन, वरुणपद भवन, चन्द्रशेखरपद भवन।

एक शाला भवन

विश्वतोमुख भवन

एकशाला यदा नूनं चतुर्द्वारसमन्वितम्।

मनोरथप्रदं गेहं नाम्ना तद्विश्वतोमुखम्॥¹

अर्थात् एक कक्ष (शाला) वाले भवन के चारों दिशाओं में चार द्वार होने पर यह गृह विश्वतोमुख नाम से जाना जाता है। यह गृह सभी प्रकार का मनोरथ पूरा करने वाला होता है।

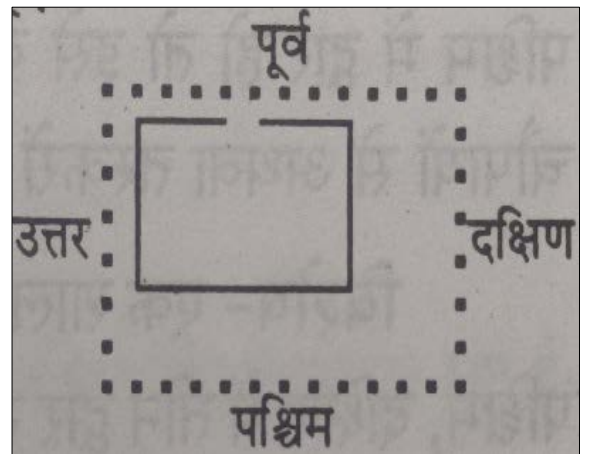
पुण्डरीक भवन -

तदैव प्रवरैर्युक्तं कोणमध्येऽथ तद्गृहम्।

पुण्डरीकं नाम भवेत्सर्वकामफलप्रदम्॥²

एक शाला कक्ष जब प्रवरों से युक्त होकर कोण के मध्य में स्थित होता है तो उसे पुण्डरीक नाम से जाना जाता है। यह सभी कामनाओं को प्रदान करने वाला होता है।

विशेष – वस्तुपरिधि के भीतर ईशान कोण में स्थित एक शाला पूर्व द्वार होने से पुण्डरीक भवन कहलाता है।



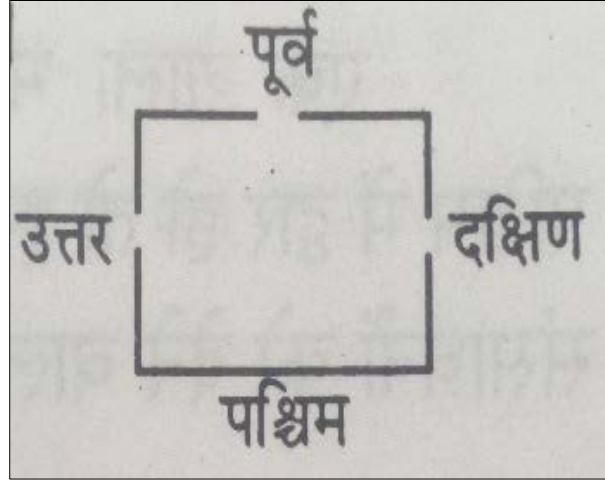
श्रीनिलय -

पश्चिमद्वारहीनं तद्गृहं श्रीनिलयाह्वयम्।

श्रीप्रदं सर्वदा राज्ञां पुत्रपौत्रप्रवर्द्धनम्॥³

एक शाला भवन में जब पश्चिम द्वार नहीं हो पूर्व, दक्षिण, उत्तर में द्वार हो तो इसे श्रीनिलय कहा जाता है। यह भवन राजाओं के लिए पुत्र-पौत्रवर्धक एवं श्रीप्रदायक होता है।

विशेष – एक शाला भवन में पूर्व, उत्तर, दक्षिण में तीन द्वार खोलने से श्रीनिलय कहलाता है।

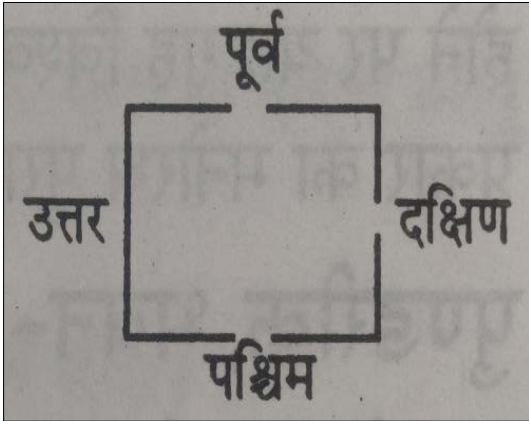


सूकरपद भवन

उदग्द्वारविहीनं तच्छूकरस्य पदाह्वयम्।
सूकराद्वयदं नूनमथवा भूपतेर्भयम्॥⁴

एक शाला भवन में जब उत्तर द्वार नहीं हो पूर्व, दक्षिण, पश्चिम में द्वार हो तो इसे सूकरपद भवन कहा जाता है। यह भवन राजाओं के लिए सूकर से भय अथवा राजाओं से भय उत्पन्न करता है।

विशेष – एक शाला भवन में पूर्व, पश्चिम, दक्षिण में तीन द्वार खोलने से सूकर पद भवन कहलाता है।



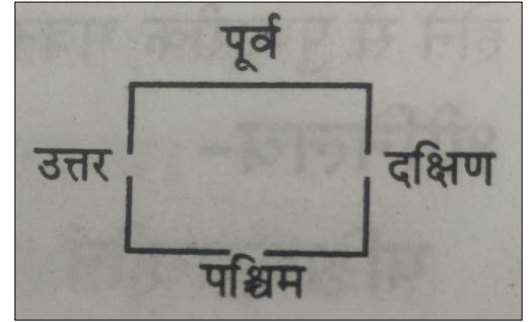
सूकरपद भवन

व्याघ्रपद भवन

पूर्वद्वारविहीनं तद् व्याघ्रस्य पदसंज्ञकम्।
चतुष्पाद् भयदं गेहमथवा तस्कराद् भयम्॥⁵

एक शाला भवन में जब पूर्व द्वार नहीं हो उत्तर, दक्षिण, पश्चिम में द्वार हो तो इसे व्याघ्रपद भवन कहा जाता है। यह भवन चौपायों से अथवा तस्करों से भय उत्पन्न करने वाला होता है।

विशेष – एक शाला भवन में उत्तर, पश्चिम, दक्षिण में तीन द्वार खोलने से व्याघ्र पद भवन कहलाता है।



शेखर भवन

दक्षिणद्वारहीनं तद्गृहं शेखरसंज्ञकम्।
सर्ववस्तुप्रदं गेहं सर्वरत्नप्रदं सदा॥⁶

एक शाला भवन में जब दक्षिण द्वार नहीं हो उत्तर, पूर्व, पश्चिम में द्वार हो तो इसे शेखर भवन कहा जाता है। यह भवन सभी संसाधनों को देने वाला तथा रत्नादि से परिपूर्ण होता है।

विशेष – एक शाला भवन में उत्तर, पूर्व, पश्चिम में तीन द्वार खोलने से शेखर भवन कहलाता है।

इस प्रकार से एक शाला भवन के तीन प्रमुख भेद हुए –

1. एक द्वार वाली एक शाला 2. तीन द्वार वाली एक शाला तथा 3. चार द्वार वाली एक शाला।

एक द्वार वाली एक शाला को धान्यादि भवन, चार द्वार वाली एक शाला को विश्वतोमुख भवन तथा तीन द्वार वाली एक शाला को श्रीनिलय, सूकरपद, व्याघ्रपद एवं शेखर भवन कहते हैं। इनमें किसी एक दिशा में द्वार नहीं होने के कारण संज्ञा भेद है।

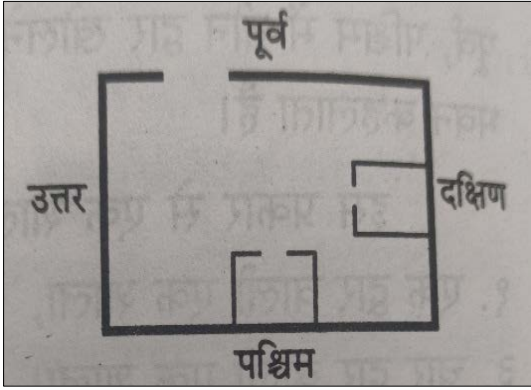
एक शाला भवन भेद कथन के पश्चात् अब यहाँ द्विशाला भवन का विचार

कमलाकर भवन

याम्यपश्चिमयोर्नूनं द्विशालं कमलाकरम्।
नामतः सर्वदा नृणां श्रीप्रदं सर्वभोगदम्॥⁷

वासुतुखण्ड के भीतर दक्षिण और पश्चिम दिशा में दो शाला (कमरा) का गृह हो तो इसे कमलाकर भवन कहा जाता है। यह भवन मनुष्यों के लिए अपने नाम के अनुरूप धन तथा सर्वभोगप्रदायक होता है।

विशेष – इस वास्तुखण्ड के भीतर दो शालायें बनी हुई हैं। दक्षिण शाला का द्वार उत्तर मुख तथा पश्चिम शाला का द्वार पूर्व मुख है। भूखण्ड का मुख्य द्वार पूर्व दिशा में स्थित है। इस भवन को कमलाकर भवन कहते हैं।



श्वापद भवन

पश्चिमोत्तरयोः शाला श्वापदं नाम नामतः।

हृद्रोगदुःखभयदमथवा चौरभीतिदम्॥⁸

वास्तुखण्ड के भीतर उत्तर और पश्चिम दिशा में दो शाला कमरा का गृह हो तो इसे श्वापद भवन कहा जाता है। यह भवन मनुष्यों के लिए हृदय रोग, दुःख और भय को प्रदान करता है अथवा चोरों द्वारा भय उत्पन्न करता है। विशेष – इस वास्तुखण्ड के भीतर दो शालायें बनी हुई हैं। उत्तर शाला का द्वार दक्षिण मुख तथा पश्चिम शाला का द्वार पूर्व मुख है। भूखण्ड का मुख्य द्वार पूर्व दिशा में स्थित है। इस भवन को “श्वापद भवन” कहते हैं।

विपक्षा भवन

प्राक्सौम्ययोर्द्विशाला सा विपक्षा दुःखकर्षिणी।

शत्रुभ्यो भयदा शश्वदथवा चौरभीतिदा॥⁹

वास्तुखण्ड के भीतर पूर्व और उत्तर दिशा में दो शाला (कमरा) का गृह हो तो इसे विपक्षा भवन कहा जाता है। यह भवन मनुष्यों के लिए सतत दुःखदायी, शत्रुओं द्वारा भय उत्पन्न करने वाला अथवा चोरों द्वारा भय उत्पन्न करने वाला होता है।

विशेष – इस वास्तुखण्ड के भीतर दो शालायें बनी हुई हैं। उत्तर शाला का द्वार दक्षिण मुख तथा पूर्व शाला का द्वार पश्चिम मुख है। भूखण्ड का मुख्य द्वार पूर्व दिशा में स्थित है। इस भवन को ‘विपक्षा भवन’ कहते हैं।

सर्पदंष्ट्रिका भवन

पूर्वदक्षिणयोर्नूनं द्विशाला सर्पदंष्ट्रिका।

आधिव्याधिव्यालचौरविशेषभयदा सदा॥¹⁰

अर्थात् वास्तुखण्ड के भीतर पूर्व और दक्षिण दिशा में दो शाला का गृह हो तो इसे सर्पदंष्ट्रिका भवन कहते हैं। यह भवन मनुष्यों के लिए ऊपरी बाधा, रोग और सर्प से भय उत्पन्न करने वाला होता है।

विशेष – इस वास्तुखण्ड के भीतर दो शालायें बनी हुई हैं। दक्षिण शाला का द्वार उत्तर मुख तथा पूर्व शाला का द्वार पश्चिम मुख है। भूखण्ड का मुख्य द्वार पूर्व दिशा में स्थित है। इस भवन को ‘सर्पदंष्ट्रिका भवन’ कहते हैं।

मंगलष्टदा भवन

याम्यपश्चिमयोरेव द्विशाला मंगलाष्टदा।

प्रासादो वाथ सौधो वा तस्यामेव तु कायरेत्॥¹¹

अर्थात् वास्तुखण्ड के भीतर दक्षिण और पश्चिम दिशा में दो शाला का गृह हो तो इसे मंगलष्टदा भवन कहा जाता है। दुर्ग अथवा अट्टालिका का निर्माण इसी दिशा में करना चाहिए।

विशेष – मंगलष्टदा भवन कमलाकर भवन का ही पर्याय है। इस श्लोक में यह प्रतिपादित किया गया है कि दो शाला का भवन यदि बनाना हो तो दक्षिण और पश्चिम की ओर ही बनाना चाहिये। इस तरह का भवन अनेक तल का हो सकता है।

षोडश भवन फल विचार

खण्डेन्दुसंज्ञकं त्वाद्यं द्वितीयं बुद्धिवर्द्धनम्।

तृतीयं शंखसंज्ञं तु धनायुः स्त्रीप्रदायकम्॥¹²

प्रथम भवन (ध्रुव) खण्डेन्दुसंज्ञक होता है। द्वितीय भवन (धान्य) बुद्धिवर्द्धक होता है। तृतीय भवन (जय) शंख संज्ञक होता है जो धन, आयु तथा स्त्री को प्रदान करता है।

चतुर्थपञ्चमं सद्य स्त्रीसौभाग्यविनाशदम्।

षष्ठसप्ताष्टमं गेहं लाभायुः श्रीप्रदं सदा॥¹³

चतुर्थ भवन (नन्द) तथा पंचम भवन (खर संज्ञक) होते हैं जो स्त्री और सौभाग्य के विनाशक होते हैं। षष्ठ (कान्ति), सप्तम (मनोरम) एवं अष्टम (सुवक्त्र) भवन लाभ, आयु एवं लक्ष्मी को देने वाले होते हैं।

नवैकादशमं दुःखरोगशोकभयप्रदम्।

द्वादशं सदनं नूनं धनधान्यप्रदं सदा॥¹⁴

नवम भवन (दुर्मुख), दशम भवन (क्रूर), एकादश भवन (विपक्ष) संज्ञक हैं जो दुःख, रोग, शोक और भय को देते हैं। द्वादश भवन (धनद) संज्ञक होता है जो हमेशा निश्चित ही धनधान्य प्रदायक होता है।

शोकदुःखप्रदं शश्वत्त्रयोदशचतुर्दशम्।

षोडशं पञ्चदशमं त्वायुरारोग्यवृद्धिदम्॥¹⁵

तेरहवाँ भवन (क्षय) एवं चौदहवाँ भवन (आक्रन्द संज्ञक) हमेशा शोक और दुःख प्रदायक होते हैं। पन्द्रहवाँ (विपुल) तथा सोलहवाँ (विजय) भवन हमेशा आयु एवं आरोग्य में वृद्धि करने वाले होते हैं।

उक्ता त्रिशालाभेदानि नामरूपफलैः सह।
त्रिशालानामभेदानि अधुना कथ्यते भृशम्॥¹⁶

इस प्रकार नाम, रूप और फल के साथ द्वि शाला के भेद कहे गये हैं। अब त्रि शाला भवनों के भेद कहे जा रहे हैं।

त्रिशाला भवन

अब यहाँ त्रिशाला भवन का भेदपूर्वक वर्णन किया जा रहा है-

जयन्ती भवन

उदङ्मुखा त्रिशाला सा जयन्ती संज्ञिता त्वथा।
विपुला कीर्तिदा राज्ञां पुत्रपौत्रधनप्रदा ॥¹⁷

त्रिशाला (तीन कमरों वाला भवन) का मुख्य द्वार यदि उत्तर दिशा की ओर हो तो उसकी जयन्ती संज्ञा होती है। यह शाला राजाओं के लिए विपुलकीर्ति, पुत्र-पौत्र एवं धन को प्रदान करने वाली होती है।

हरिपद भवन

प्राग्द्वारसहिता सा च नाम्ना हरिपदाह्वयम्।
तदीप्सितार्थफलदं राज्ञां मुख्यतरं सदा ॥¹⁸

त्रिशाला (तीन कमरों वाला भवन) का मुख्य द्वार यदि पूर्व दिशा की ओर हो तो उसकी हरिपद संज्ञा होती है। मुख्य रूप से यह शाला राजाओं के लिए सदैव इच्छित वस्तु को देने वाली होती है।

उष्ट्रदंष्ट्रा भवन

सा दक्षिणद्वारयुता चोष्ट्र दंष्ट्राह्वया भुवि।
निःस्वप्रदा क्षितीशानामथवा शत्रुभीतिदा ॥¹⁹

त्रिशाला (तीन कमरों वाला भवन) का मुख्य द्वार यदि दक्षिण दिशा की ओर हो तो उसकी उष्ट्रदंष्ट्रा संज्ञा होती है। यह शाला राजाओं के लिए दरिद्रता प्रदान करने वाली अथवा शत्रुओं से भय पैदा करने वाली होती है।

कुसुम भवन

पश्चिमद्वारसहिता सर्वदाकुसुमाह्वया।
मित्रवृद्धिप्रदा नृणामथवा भ्रातृवृद्धिदा ॥²⁰

त्रिशाला (तीन कमरों वाला भवन) का मुख्य द्वार यदि पश्चिम दिशा की ओर हो तो उसकी कुसुम संज्ञा होती है। यह शाला मनुष्यों के लिए मित्रवृद्धिकारी तथा भ्रातृवृद्धिकारी होती है।

नक्षत्रपद भवन

नानाकल्याणदाः शश्वत्पुत्रपौत्रप्रवर्द्धिनी।
प्राङ्मुखा या त्रिशाला सा नक्षत्रपदसंज्ञिता॥²¹

पूर्व मुख वाली त्रिशाला नक्षत्रपद संज्ञक होती है। यह शाला नाना प्रकार के कल्याणों को देने वाली तथा शाश्वत रूप से पुत्र-पौत्रों को बढ़ाने वाली होती है।

विशेष- हरिपद भवन और नक्षत्रपद भवन का स्वरूप एक ही है। इन दोनों में सूक्ष्म भेद क्या हो सकता है? इसका उल्लेख यहाँ नहीं है।

स्वर्णगर्भ भवन-

सर्वदा धनदा नृणां दुःखशोकविनाशदा।
उदग्द्वारयुता सा च स्वर्णगर्भाह्वया क्षितौ ॥²²

उत्तर मुख वाली त्रिशाला स्वर्णगर्भ संज्ञक होती है। यह शाला पृथ्वी पर मनुष्यों के लिए हमेशा धनदायक एवं दुःख-शोक विनाशक होती है।

विशेष - जयन्ती भवन और स्वर्णगर्भ भवन का स्वरूप एक ही है। इन दोनों में सूक्ष्म भेद क्या हो सकता है? इसका उल्लेख यहाँ नहीं है।

स्वर्णदास्वपरं चोदङ्मुखायां यत्फलं तु तत्।
कुलक्षयकरा सैव त्रिशाला दक्षिणामुखा ॥²³

स्वर्णदा नामक त्रिशाला उत्तर मुख होने पर जो शुभफल देती है, वही त्रिशाला दक्षिणमुखी हो जाने पर वंशक्षयकारी हो जाती है।

विशेष- त्रिशाला भवन में पूर्वमुख द्वार होने पर शुभत्व की प्राप्ति होती है। यह त्रिशाला जब दक्षिणमुखी हो जाती है तो वह वंशक्षयकारी हो जाती है। इससे स्पष्ट है कि दक्षिणमुख त्रिशाला भवन का सम्पूर्णतः परित्याग कर देना चाहिए।

शालानां पापसंज्ञानां दृष्ट्वा सूर्य्य निरीक्षयेत्।
प्रत्यङ्मुखा त्रिशाला सा क्षयाख्या नामतस्तथा ॥²⁴

पापसंज्ञक त्रिशालाओं का दर्शन करके सूर्यदेवता का दर्शन करना चाहिए। प्रत्यङ्ग (पश्चिम) मुखी त्रिशाला को क्षयाख्या नाम से जाना जाता है।

विशेष- यदि दूसरे का भी त्रिशाला भवन दक्षिण मुख हो तो उसे देखकर सूर्यदेवता का दर्शन करना चाहिए। इससे अशुभ त्रिशाला दर्शन का दुष्परिणाम समाप्त हो जाता है।

बहुव्ययकरी सैव पुत्रायुर्धननाशदा।
गृहोपरि गृहाणां च सम्यक्संचिन्त्य बुद्धिमान्॥²⁵

क्षयाख्या त्रिशाला अत्यधिक व्यय करने वाली होती है। यह पुत्र, आयु और धन का नाश करती है। बुद्धिमान् व्यक्ति अनेक मंजिल इमारतों को अत्यन्त सोच-विचार कर ही बनाये।

विशेष- अनेक तल भवन बनाते समय बुद्धिमान् व्यक्ति को भवन की मजबूती का विशेष ध्यान रखना चाहिए। भवन ऐसा होना चाहिए जो भूकम्प, अतिवृष्टि, वात्याचक्र और प्राकृतिक आपदाओं के समय दृढ़ता से खड़ा रहे।

प्रस्तारं यन्मनोरम्यं नानारूपप्रभेदतः।
उक्ता त्रिशालाभेदानि चतुःशालामथोऽच्यते॥²⁶

नाना प्रकार के रूप और भेद वाले मनोरम त्रिशाला भवनों के संदर्भ में यहाँ कहा गया है। अब चतुःशाला के संदर्भ में कहा जा रहा है।

पितामहोक्तमार्गेण नामरूपफलैः पृथक्।
चतुःशाला चतुर्भेदा सर्वतो भद्रसंज्ञिता॥²⁷

भगवान् ब्रह्मा के द्वारा कहे गये विधान से चतुःशालाओं के नाम, रूप और फल के पृथक्-पृथक् वर्णन किये जा रहे हैं। ये चतुःशालायें सर्वतो भद्र संज्ञिका होती हैं।

नन्द्यावर्त भवन

आयुरारोग्यविपुला कीर्तिसंपत्प्रदा नृणाम्।
पश्चिमद्वारसहिता नन्द्यावर्त्ताह्वया भृशम्॥²⁸

यदि चार कमरों वाले भवन (चतुःशाला) का मुख्य द्वार पश्चिम की ओर हो तो उसे नन्द्यावर्त भवन कहते हैं। यह भवन मनुष्यों के लिए आयु, आरोग्य, विपुल कीर्ति एवं सम्पत् को प्रदान करने वाला होता है।

रुचक भवन

सुगन्धवस्तुनिचयवस्त्ररत्नप्रदा सदा।
उत्तरद्वारसहिता शश्वत्सा रुचकाह्वया॥²⁹

यदि चार कमरों वाले भवन (चतुःशाला) का मुख्य द्वार उत्तर दिशा की ओर हो तो उसे रुचक भवन कहते हैं। यह चतुःशाला भवन सुगन्ध, वस्तुसमूह, वस्त्र एवं रत्नों को प्रदान करने वाला होता है।

स्वस्तिक भवन

अन्नपानाद्विनिखिलभोगसौभाग्यपुत्रदा।
प्राग्द्वारसहिता सैव स्वस्तिकेति प्रकीर्तिता॥³⁰

यदि चार कमरों वाले भवन (चतुःशाला) का मुख्य द्वार पूर्व दिशा की ओर हो तो उसे स्वस्तिक भवन कहते हैं। यह चतुःशाला भवन अन्न, पान (सुगन्धित पेय पदार्थ, सम्पूर्णभोग, सौभाग्य और पुत्र को देने वाला होता है।

वर्द्धमान भवन

गजाश्वपशुलोहादिभूषणश्रीप्रदा नृणाम्।
दक्षिणद्वारसहिता वर्द्धमानाह्वया भुवि॥³¹

यदि चार कमरों वाले भवन (चतुःशाला) का मुख्य द्वार दक्षिण दिशा की ओर हो तो उसे वर्द्धमान भवन कहते हैं। यह चतुःशाला भवन मनुष्यों के लिए हाथी, घोड़ा, पशु, लोहा, आभूषण एवं लक्ष्मी को देने वाला होता है।

गृहराट् एवं कुबेरपद भवन

तत्रस्थसर्ववस्तूनि वर्द्धन्ते वै श्रिया सह।
चतुःशालामध्यभागे कुर्यात्पूर्वमुखं गृहम्॥
गृहराडिति विख्यातं सर्वसंपत्प्रदं सदा।
तद्गृहं याम्यवक्त्रं चेत्कुबेरपदसंज्ञकम्॥³²

इस वर्द्धमान भवन में सभी वस्तुएं श्रीयुक्त होकर बढ़ती रहती हैं। चतुःशाला के मध्य भाग में यदि पूर्वमुख द्वार का निर्माण किया जाता है तो उसकी गृहराज (भवनों का सम्राट्) संज्ञा होती है। यह भवन सर्वसम्पत् प्रदायक होता है। यदि यही भवन दक्षिण मुख का हो तो उसकी कुबेर पद संज्ञा होती है।

महेन्द्रपद भवन

शश्वत्कुबेरगृहवदालये सर्वसंपदाम्।
प्रत्यग्वक्त्रं मन्दिरं वै महेन्द्रपदसंज्ञितम्॥³³

कुबेरपद चतुःशाला भवन में कुबेर के भवन की तरह सभी सम्पदायें हमेशा विद्यमान रहती हैं। चतुःशाला भवन का मुख पश्चिम की ओर हो तो वह महेन्द्रपद संज्ञक भवन होता है।

वरुणपद भवन

इन्द्रवेश्म यथा सर्वसंपद्युक्तं तथैव तत्।
उदङ्मुखं तत्सदनं वारुणं पदसंज्ञितम्।
सर्वरत्नालयं गेहं सर्वभोगसुखावहम्॥³⁴

यह महेन्द्रपद संज्ञक भवन स्वर्ग लोक में विद्यमान इन्द्र भवन की तरह सर्वसम्पत् युक्त बना रहता है। चतुःशाला भवन का मुख्य द्वार उत्तर दिशा की ओर हो तो वह वरुणपद संज्ञक भवन होता है। यह भवन सभी रत्नों का कोषागार एवं सर्वभोग एवं सुख को देने वाला होता है।

चन्द्रशेखरपद भवन

एक प्रासादो वाथ सौधो वा तद्गृहे वै भवेद्यदि।
तच्चन्द्रशेखरपदं निधीनामालयं भृशम्॥³⁵

वह वारुणपद संज्ञक भवन यदि अनेक तल का हो तो वह प्रासाद या सौध चन्द्रशेखरपद भवन नाम से जाना जाता है। इस भवन में स्वतः सम्पूर्ण निधियों का निवास रहता है।

कोणेष्वयचरं कुर्यान्महेन्द्रपदसंज्ञितम्।
महेन्द्रनिलयं यद्वत्तद्वच्च संपदालयम्॥³⁶

वास्तुखण्ड के भीतर यदि यही चन्द्रशेखरपद भवन कोण में स्थित हो तो उसे महेन्द्रपद भवन नाम से जाना जाता है। यह इन्द्र के भवन जैसा होता है। इसमें सभी सम्पत्तियाँ निवास करती हैं।

विशेष- महेन्द्र पद भवन पश्चिम मुख चतुःशाला भवन को कहते हैं और अनेक तल वाला चतुःशाला प्रासाद उत्तरमुख होने पर चन्द्रशेखर पद भवन कहलाता है। इससे सिद्ध होता है कि एक तल से ऊँचा भवन यदि पूर्व या उत्तर मुख हो तो उसकी गुणवत्ता अत्यधिक हो जाती है।

अस्यामपि द्वित्रिचतुःपञ्चषट्सप्तभूमिकैः।
षोडशाख्यानि जातानि तानि प्रस्तारतः क्रमात्॥³⁷

इन चतुःशालाओं के भी दो, तीन, चार, पाँच, छः तथा सात तल के भेदवश सोलह प्रकार होते हैं। इन प्रकारों को यहाँ क्रमपूर्वक कहा जा रहा है।

पञ्चादिदशपर्यन्तः शालास्त्वेवं प्रकल्पयेत्।
प्रास्तारनामदिरूपफलैर्यो वास्तुकोविदः॥³⁸

पाँच तल से लेकर दस तल पर्यन्त शालाओं की परिकल्पना करनी चाहिए। वास्तुकोविद् (श्रेष्ठवास्तुविद्) को प्रस्तारों के नाम, रूप और फल के अनुसार प्रभाव को समझना चाहिए।

भवन कक्ष वर्णन

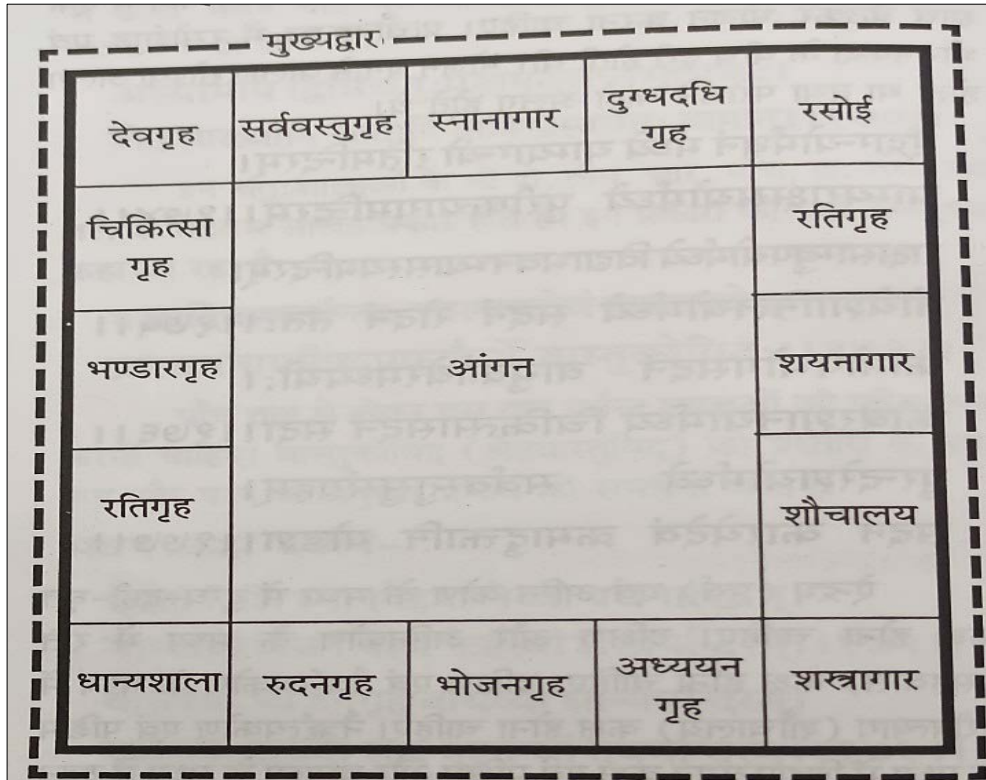
ऐन्द्र्यां दिशि स्नानगेहमाग्नेय्यां पचनालयम्।
याम्यायां शयनं वेश्म नैर्ऋत्यां शस्त्रमन्दिरम्॥
वारुण्यां भोजनगृहं वायव्यां धान्यमन्दिरम्।
उदीच्यां हाटकं सद्य ऐशान्यां देवमन्दिरम्॥³⁹

2. ऐन्द्र (पूर्व) दिशा में स्नानगृह, अग्निकोण में रसोईगृह, दक्षिण के मध्य में शयनगृह, नैर्ऋत्यकोण में शस्त्रागार, वरुण (पश्चिम) दिशा में भोजनगृह, वायव्यकोण में धान्यगृह, उत्तर के मध्य में हाटकगृह, ईशानकोण में देवतागृह का निर्माण करना चाहिए।

विशेष- उदीच्यां हाटकं सद्य के स्थान पर भाण्डारसदनं सौम्ये भी पाठभेद मिलता है। ब्रह्मर्षि वसिष्ठ के मतानुसार अग्निकोण में भोजन का निर्माण होना चाहिए तथा पश्चिम के मध्य भाग में एक साथ बैठकर भोजन करना चाहिए। प्राचीनकाल में रसोईगृह एवं भोजनकक्ष के बीच दूरी होती थी। भोजन बनाने वाला रसोइया अलग होता था तथा परोसने वाले अलग होते थे।

ऐन्द्राग्न्योर्मथनं मध्ये याम्याग्न्यो रतिमन्दिरम्।
याम्यराक्षसयोर्मध्ये पुरीषत्यागमन्दिरम्॥
राक्षसाम्बुपयोर्मध्ये विद्याभवनभ्यासस्यमन्दिरम्।
तोयेशानिलयोर्मध्ये सदनं रोदनं ततः॥
कामोपभोगसदनं वायुकौबेरमध्ययोः।
कौबेरशानयोर्मध्ये चिकित्सासदनं सदा ॥
पुरन्दरेशयोर्मध्ये सर्ववस्तुसुसंग्रहम्।
सदनं कारयेदेवं क्रमादुक्तानि षोडश ॥⁴⁰

ऐन्द्र्य (पूर्व) एवं अग्नि कोण के मध्य में दुग्ध-दही-घृत कक्ष होना चाहिए। दक्षिण और अग्निकोण के मध्य में रति (सहवास) कक्ष होना चाहिए। दक्षिण एवं नैर्ऋत्यकोण के मध्य में पुरीषत्याग (शौचालय) कक्ष होना चाहिए। नैर्ऋत्यकोण एवं पश्चिम के मध्य में विद्याध्ययन कक्ष एवं पश्चिम और वायव्य के मध्य में रुदन कक्ष होना चाहिए। वायव्य और उत्तर दिशा के मध्य में कामोपभोग (रति या सहवास) कक्ष, उत्तर दिशा एवं ईशानकोण के बीच में चिकित्सा कक्ष का निर्माण करना चाहिए। ईशानकोण एवं पूर्व के मध्य में सम्पूर्ण वस्तुओं के संग्रह का घर बनाना चाहिए। इस प्रकार से क्रमशः षोडश (सोलह) कमरों का भवन बनाने का विधान कहा गया है।



ब्रह्मर्षि वसिष्ठ पोक्त षोडश कक्ष भवन चित्र

सोलह कमरों से परिपूर्ण वृहद् भवन की रूपरेखा ब्रह्मर्षि वसिष्ठ के द्वारा प्रस्तुत की गयी थी। यह भवन अनेक तल का हो सकता है। इसमें ध्यान यह

रखना होता है कि रसोई के ऊपर रसोई ही रहे अथवा शौचालय के ऊपर शौचालय ही। इस वास्तुविन्यास में आजकल के ड्राईंगरूम (बैठका) का

संदर्भ

- ~ 198 ~